



Original Article

पर्यावरणीय संकट और भारतीय दार्शनिक चिंतन : प्रकृति एवं मानव संबंध का अध्ययन

बिंदेश्वरी प्रसाद सिंह

शोधार्थी, दर्शनशास्त्र विभाग

वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

Manuscript ID:

IJAAR-130507

ISSN: 2347-7075

Impact Factor – 8.141

Volume - 13

Issue - 5

May – June 2026

Pp. 55 - 63

Submitted: 9 May 2026

Revised: 20 May 2026

Accepted: 1 June 2026

Published: 10 June 2026

Corresponding Author:

बिंदेश्वरी प्रसाद सिंह

Quick Response Code:



Website: <https://ijaar.co.in/>



DOI: 10.5281/zenodo.20772622

DOI Link:

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20772622>

सारांश :

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में पर्यावरणीय संकट मानव सभ्यता के समक्ष सबसे गंभीर चुनौतियों में से एक बन चुका है। पृथ्वी पर निरंतर बढ़ता तापमान, वैश्विक ऊष्मीकरण, जलवायु परिवर्तन, वायु एवं जल प्रदूषण, वनों की अंधाधुंध कटाई, जैव विविधता का विनाश तथा प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन न केवल प्रकृति के संतुलन को प्रभावित कर रहे हैं, बल्कि मानव जीवन के अस्तित्व के लिए भी गंभीर खतरा उत्पन्न कर रहे हैं। आधुनिक विज्ञान एवं तकनीकी विकास ने मानव जीवन को सुविधाजनक अवश्य बनाया है, किन्तु भौतिकवादी एवं उपभोक्तावादी जीवन शैली ने प्रकृति और मानव के मध्य स्थापित संतुलित संबंध को अत्यधिक कमजोर कर दिया है। आज मानव स्वयं को प्रकृति का स्वामी मानकर उसका निरंतर शोषण कर रहा है, जिसके परिणामस्वरूप प्राकृतिक आपदाओं, असंतुलित मौसम, जल संकट तथा पर्यावरणीय असुरक्षा जैसी समस्याएँ तीव्र गति से बढ़ती जा रही हैं।

ऐसे संकटपूर्ण समय में भारतीय दार्शनिक चिंतन अत्यंत प्रासंगिक एवं मार्गदर्शक सिद्ध होता है। भारतीय दर्शन में प्रकृति को केवल भौतिक संसाधन अथवा उपभोग की वस्तु नहीं माना गया है, बल्कि उसे जीवन, चेतना, आध्यात्मिकता तथा संपूर्ण सृष्टि के मूल आधार के रूप में स्वीकार किया गया है। भारतीय सांस्कृतिक परंपरा में पृथ्वी को माता, नदियों को देवी, वृक्षों को देवतुल्य तथा पशु-पक्षियों को जीवन चक्र का महत्वपूर्ण अंग माना गया है। वेद, उपनिषद, भगवद्गीता, बौद्ध एवं जैन दर्शन सहित भारतीय चिंतन की विभिन्न धाराओं में प्रकृति के प्रति सम्मान, सह-अस्तित्व, करुणा, संयम एवं संरक्षण की भावना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

भारतीय दार्शनिक दृष्टिकोण यह प्रतिपादित करता है कि मानव और प्रकृति का संबंध परस्पर निर्भरता एवं संतुलन पर आधारित होना चाहिए। भारतीय चिंतन “वसुधैव कुटुम्बकम्” की भावना के माध्यम से संपूर्ण सृष्टि को एक परिवार के रूप में देखता है। यह विचारधारा पर्यावरण संरक्षण के साथ-साथ नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों को भी विशेष महत्व प्रदान करती है। वर्तमान समय में जब विश्व सतत विकास की अवधारणा की ओर अग्रसर है, तब भारतीय दर्शन में निहित पर्यावरणीय चेतना एवं जीवन मूल्य मानव समाज को संतुलित तथा प्रकृति-समन्वित जीवन शैली अपनाने की प्रेरणा प्रदान करते हैं।

प्रस्तुत शोध आलेख में पर्यावरणीय संकट के प्रमुख कारणों, उसके सामाजिक एवं प्राकृतिक प्रभावों तथा भारतीय दार्शनिक परंपरा में निहित पर्यावरणीय दृष्टिकोण का विस्तृत



अध्ययन किया गया है। साथ ही यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि भारतीय दर्शन की शिक्षाएँ वर्तमान पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान में किस प्रकार सहायक सिद्ध हो सकती हैं। यह अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि यदि मानव भारतीय सांस्कृतिक एवं दार्शनिक मूल्यों—जैसे संयम, सह-अस्तित्व, अहिंसा, प्रकृति-प्रेम तथा नैतिक जीवन—को पुनः अपनाए, तो पर्यावरणीय संकट को काफी हद तक नियंत्रित किया जा सकता है तथा मानव और प्रकृति के मध्य पुनः संतुलित एवं सामंजस्यपूर्ण संबंध स्थापित किया जा सकता है।

**प्रमुख शब्द :** पर्यावरण, भारतीय दर्शन, प्रकृति, पर्यावरणीय संकट, सह-अस्तित्व, जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण संरक्षण, सतत विकास, नैतिकता, भारतीय संस्कृति।



Creative Commons



**Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)**

This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International License (CC BY-NC-SA 4.0), which permits others to remix, adapt, and build upon the work non-commercially, provided that appropriate credit is given and that any new creations are licensed under identical terms.

**How to cite this article:**

बिंदेश्वरी प्रसाद सिंह. (2026). पर्यावरणीय संकट और भारतीय दार्शनिक चिंतन : प्रकृति एवं मानव संबंध का अध्ययन. *International Journal of Advance and Applied Research*, 13(5), 55 – 63. <https://doi.org/10.5281/zenodo.20772622>

**भूमिका :**

मानव और प्रकृति का संबंध अत्यंत प्राचीन, गहन एवं अविभाज्य रहा है। मानव जीवन का संपूर्ण अस्तित्व प्रकृति पर आधारित है, क्योंकि जल, वायु, भूमि, वनस्पति, सूर्य, नदियाँ, पर्वत तथा समस्त जीव-जंतु मानव जीवन के लिए अनिवार्य तत्व हैं। प्रकृति केवल मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाला साधन मात्र नहीं है, बल्कि वह जीवन, संतुलन एवं सृष्टि की निरंतरता का आधार भी है। आदिकाल से ही मानव प्रकृति के सान्निध्य में जीवन यापन करता आया है तथा उसकी संस्कृति, सभ्यता, परंपराएँ एवं धार्मिक विश्वास प्रकृति से गहरे रूप में जुड़े रहे हैं। भारतीय संस्कृति में प्रकृति को माता के समान पूजनीय एवं पवित्र माना गया है। ऋग्वेद में पृथ्वी को “माता” तथा मानव को उसका “पुत्र” कहा गया है, जो मानव एवं प्रकृति के आत्मीय संबंध को स्पष्ट करता है।<sup>1</sup>

भारतीय सांस्कृतिक परंपरा में प्रकृति के विविध रूपों की पूजा का विशेष महत्व रहा है। नदियों को देवी, वृक्षों को देवतुल्य, पर्वतों को पवित्र तथा पशु-पक्षियों को जीवन चक्र का महत्वपूर्ण अंग माना गया है। पीपल, बरगद, तुलसी आदि वृक्षों की पूजा तथा गंगा, यमुना जैसी नदियों के प्रति श्रद्धा भारतीय समाज में प्रकृति संरक्षण की प्राचीन चेतना को अभिव्यक्त करती है। भारतीय चिंतन में संपूर्ण सृष्टि को एक परिवार के रूप में देखने की भावना “वसुधैव कुटुम्बकम्” के रूप में प्रकट होती है। यह विचारधारा मानव एवं प्रकृति के मध्य संतुलन, सह-अस्तित्व तथा पारस्परिक सम्मान पर आधारित है।

किन्तु आधुनिक युग में विज्ञान एवं तकनीकी विकास, औद्योगीकरण, शहरीकरण तथा भौतिकवादी जीवन शैली ने मानव के दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन उत्पन्न कर दिया है। आधुनिक मनुष्य प्रकृति को केवल उपभोग एवं



आर्थिक लाभ का साधन मानने लगा है। परिणामस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन, वनों की कटाई, औद्योगिक प्रदूषण, प्लास्टिक कचरे में वृद्धि तथा ऊर्जा संसाधनों का अत्यधिक उपयोग निरंतर बढ़ता जा रहा है। उपभोक्तावादी संस्कृति ने मानव की आवश्यकताओं को असीमित बना दिया है, जिससे पर्यावरणीय संतुलन गंभीर रूप से प्रभावित हुआ है।

आज विश्व के समक्ष पर्यावरणीय संकट एक गंभीर वैश्विक समस्या के रूप में उपस्थित है। वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, भूमि प्रदूषण, वैश्विक ऊष्मीकरण, जलवायु परिवर्तन, ओजोन परत का क्षरण, जैव विविधता का विनाश तथा प्राकृतिक आपदाओं की बढ़ती घटनाएँ मानव अस्तित्व के लिए चुनौती बन चुकी हैं। पृथ्वी का बढ़ता तापमान हिमनदों के पिघलने, समुद्र के जलस्तर में वृद्धि तथा असंतुलित मौसम जैसी समस्याओं को जन्म दे रहा है। अनेक वैज्ञानिक रिपोर्टें यह संकेत देती हैं कि यदि पर्यावरणीय संकट पर समय रहते नियंत्रण नहीं किया गया, तो भविष्य में मानव जीवन और अधिक संकटग्रस्त हो सकता है।

ऐसी परिस्थिति में भारतीय दार्शनिक चिंतन अत्यंत महत्वपूर्ण एवं प्रासंगिक सिद्ध होता है। भारतीय दर्शन प्रकृति एवं मानव के मध्य संतुलन, संयमित उपभोग, नैतिकता तथा सह-अस्तित्व की भावना पर बल देता है। वेद, उपनिषद, भगवद्गीता, बौद्ध एवं जैन दर्शन में प्रकृति संरक्षण, अहिंसा, करुणा एवं जीवों के प्रति संवेदनशीलता का व्यापक वर्णन मिलता है। भारतीय दर्शन यह शिक्षा देता है कि मानव प्रकृति का स्वामी नहीं, बल्कि उसका अभिन्न अंग है। इसलिए प्रकृति का संरक्षण करना मानव का नैतिक एवं सामाजिक दायित्व है।

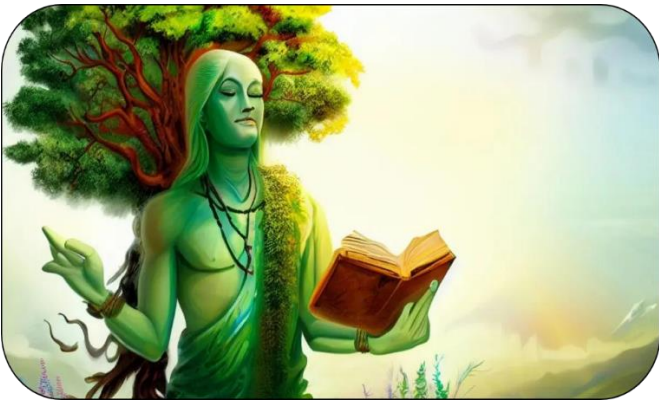
वर्तमान समय में जब संपूर्ण विश्व पर्यावरण संरक्षण एवं सतत विकास की दिशा में प्रयासरत है, तब भारतीय दार्शनिक परंपरा में निहित पर्यावरणीय चेतना अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकती है। भारतीय जीवन मूल्यों में निहित संतुलन, संयम एवं प्रकृति-प्रेम की भावना आधुनिक समाज को पर्यावरणीय संकट से उबरने की प्रेरणा प्रदान करती है। प्रस्तुत शोध आलेख में पर्यावरणीय संकट की समस्या, उसके कारणों एवं प्रभावों के साथ-साथ भारतीय दार्शनिक चिंतन में निहित पर्यावरणीय दृष्टिकोण का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है, ताकि मानव और प्रकृति के मध्य संतुलित संबंध की आवश्यकता को स्पष्ट किया जा सके।

#### **शोध के उद्देश्य :**

प्रस्तुत शोध अध्ययन का मुख्य उद्देश्य वर्तमान पर्यावरणीय संकट के संदर्भ में भारतीय दार्शनिक चिंतन की प्रासंगिकता का विश्लेषण करना है। इस शोध के अंतर्गत मानव एवं प्रकृति के पारस्परिक संबंधों को भारतीय सांस्कृतिक एवं दार्शनिक दृष्टिकोण से समझने का प्रयास किया गया है। शोध के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं —

1. वर्तमान पर्यावरणीय संकट के प्रमुख कारणों एवं उसके दुष्प्रभावों का अध्ययन करना।
2. भारतीय दर्शन में प्रकृति, पर्यावरण एवं सह-अस्तित्व संबंधी अवधारणाओं का विश्लेषण करना।
3. मानव एवं प्रकृति के पारस्परिक संबंधों को भारतीय सांस्कृतिक दृष्टिकोण से स्पष्ट करना।
4. वेद, उपनिषद, बौद्ध, जैन एवं गीता आदि भारतीय दार्शनिक परंपराओं में निहित पर्यावरणीय चेतना का अध्ययन करना।

5. पर्यावरण संरक्षण में भारतीय दार्शनिक चिंतन की भूमिका एवं उसके व्यावहारिक महत्व को प्रस्तुत करना।
6. आधुनिक भौतिकवादी एवं उपभोक्तावादी जीवन शैली के कारण उत्पन्न पर्यावरणीय समस्याओं का विश्लेषण करना।
7. वर्तमान वैश्विक पर्यावरणीय संकट के समाधान हेतु भारतीय दर्शन की उपयोगिता एवं प्रासंगिकता को रेखांकित करना।
8. मानव समाज में प्रकृति के प्रति नैतिकता, संवेदनशीलता एवं संरक्षण की भावना विकसित करने की आवश्यकता को स्पष्ट करना।
9. सतत विकास एवं पर्यावरण संतुलन की स्थापना में भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की भूमिका का अध्ययन करना।
10. मानव एवं प्रकृति के मध्य संतुलित, सामंजस्यपूर्ण एवं सह-अस्तित्व आधारित संबंध की आवश्यकता को स्थापित करना।



### पर्यावरणीय संकट : वर्तमान परिदृश्य :

वर्तमान समय में पर्यावरणीय संकट संपूर्ण विश्व के समक्ष एक गंभीर एवं चिंताजनक समस्या के रूप में उपस्थित है। मानव सभ्यता के विकास के साथ विज्ञान, तकनीक एवं औद्योगिक प्रगति ने जहाँ जीवन को सुविधाजनक बनाया है, वहीं दूसरी ओर प्रकृति के संतुलन को भी गहराई से प्रभावित किया है। आज पृथ्वी का पर्यावरण निरंतर प्रदूषित होता जा रहा है तथा प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक एवं अनियंत्रित दोहन मानव जीवन के लिए खतरा बन चुका है। पर्यावरणीय असंतुलन केवल किसी एक देश या क्षेत्र की समस्या नहीं रह गया है, बल्कि यह वैश्विक संकट का रूप धारण कर चुका है। औद्योगीकरण एवं शहरीकरण के विस्तार ने पर्यावरण प्रदूषण को अत्यधिक बढ़ावा दिया है। उद्योगों एवं कारखानों से निकलने वाला धुआँ वायुमंडल को विषैला बना रहा है। पेट्रोल एवं डीजल से चलने वाले वाहनों से निकलने वाली गैसों वायु प्रदूषण का प्रमुख कारण बन चुकी हैं। इसके परिणामस्वरूप मानव में दमा, फेफड़ों के रोग, हृदय रोग तथा अन्य श्वसन संबंधी बीमारियाँ निरंतर बढ़ रही हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वायु प्रदूषण वर्तमान समय में मानव स्वास्थ्य के लिए सबसे बड़े खतरों में से एक माना जा रहा है।<sup>2</sup>

जल प्रदूषण भी आज गंभीर समस्या बन चुका है। नदियों, तालाबों एवं जलाशयों में औद्योगिक अपशिष्ट, प्लास्टिक एवं रासायनिक पदार्थों के प्रवाह के कारण जल स्रोत दूषित होते जा रहे हैं। गंगा, यमुना जैसी पवित्र नदियाँ भी प्रदूषण की समस्या से प्रभावित हैं। पीने योग्य स्वच्छ जल की कमी भविष्य के लिए गंभीर संकट का संकेत देती है। जल



प्रदूषण के कारण अनेक जलजनित रोग उत्पन्न हो रहे हैं, जिससे मानव स्वास्थ्य प्रभावित हो रहा है।

इसके अतिरिक्त वनों की अंधाधुंध कटाई ने पर्यावरण संतुलन को गंभीर रूप से प्रभावित किया है। वृक्षों की निरंतर कमी के कारण वर्षा चक्र असंतुलित हो रहा है तथा भूमि की उर्वरता में कमी आ रही है। वन केवल पर्यावरण संतुलन बनाए रखने में ही सहायक नहीं होते, बल्कि वे जैव विविधता के संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वनों के विनाश से अनेक जीव-जंतु विलुप्ति के कगार पर पहुँच गए हैं।

वैश्विक ऊष्मीकरण एवं जलवायु परिवर्तन वर्तमान पर्यावरणीय संकट के सबसे गंभीर रूपों में से एक हैं। पृथ्वी के बढ़ते तापमान के कारण हिमनद तेजी से पिघल रहे हैं तथा समुद्र के जलस्तर में वृद्धि हो रही है। असमय वर्षा, सूखा, बाढ़, चक्रवात तथा अत्यधिक गर्मी जैसी प्राकृतिक आपदाएँ निरंतर बढ़ती जा रही हैं। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम की रिपोर्टों के अनुसार यदि समय रहते पर्यावरण संरक्षण के प्रभावी उपाय नहीं किए गए, तो भविष्य में यह संकट और भी भयावह हो सकता है।<sup>3</sup>

प्लास्टिक प्रदूषण भी आधुनिक युग की एक बड़ी समस्या बन चुका है। प्लास्टिक पदार्थ न तो आसानी से नष्ट होते हैं और न ही पर्यावरण में शीघ्र घुल-मिल पाते हैं। परिणामस्वरूप भूमि, जल एवं समुद्री जीवन पर इसका अत्यंत नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। समुद्रों में प्लास्टिक कचरे की बढ़ती मात्रा अनेक जलीय जीवों के जीवन के लिए संकट उत्पन्न कर रही है।

जैव विविधता का निरंतर विनाश भी पर्यावरणीय असंतुलन का प्रमुख कारण है। अनेक पशु-पक्षी एवं

वनस्पतियाँ विलुप्त होती जा रही हैं। प्रकृति में प्रत्येक जीव का अपना महत्व होता है तथा जैव विविधता का संतुलन ही पर्यावरण को स्थिर बनाए रखता है। जब यह संतुलन बिगड़ता है, तब संपूर्ण पारिस्थितिक तंत्र प्रभावित होता है।

इन सभी समस्याओं का मूल कारण मानव की स्वार्थपरक एवं उपभोक्तावादी मानसिकता है। आधुनिक मनुष्य प्रकृति को केवल भौतिक लाभ प्राप्त करने का साधन मान बैठा है। असीमित इच्छाओं एवं भौतिक सुखों की लालसा ने प्राकृतिक संसाधनों के अनियंत्रित दोहन को बढ़ावा दिया है। मानव यह भूलता जा रहा है कि प्रकृति का संतुलन ही उसके अस्तित्व का आधार है। यदि पर्यावरण का संरक्षण नहीं किया गया, तो भविष्य में मानव सभ्यता को गंभीर संकटों का सामना करना पड़ सकता है।

अतः वर्तमान समय में पर्यावरण संरक्षण केवल सामाजिक अथवा वैज्ञानिक आवश्यकता नहीं, बल्कि मानव अस्तित्व की अनिवार्य शर्त बन चुका है। इसके लिए आवश्यक है कि मानव प्रकृति के प्रति संवेदनशील दृष्टिकोण अपनाए तथा संतुलित एवं संयमित जीवन शैली को स्वीकार करे।

### **भारतीय दार्शनिक चिंतन और प्रकृति :**

भारतीय दार्शनिक परंपरा में प्रकृति को अत्यंत महत्वपूर्ण एवं पवित्र स्थान प्रदान किया गया है। भारतीय चिंतन के अनुसार प्रकृति केवल भौतिक पदार्थों का समूह नहीं है, बल्कि वह चेतना, संतुलन एवं जीवन का आधार है। भारतीय दर्शन में मानव एवं प्रकृति के मध्य गहरा आध्यात्मिक एवं नैतिक संबंध स्थापित किया गया है। यहाँ



प्रकृति को उपभोग की वस्तु नहीं, बल्कि पूजनीय एवं संरक्षित किए जाने योग्य सत्ता माना गया है।

भारतीय संस्कृति में पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश को पंचमहाभूत कहा गया है। ये पंचतत्व संपूर्ण सृष्टि के आधार माने गए हैं। मानव शरीर भी इन्हीं तत्वों से निर्मित माना गया है, इसलिए भारतीय चिंतन प्रकृति एवं मानव को एक-दूसरे से अभिन्न रूप में देखता है। उपनिषदों में समस्त सृष्टि में एक ही परम चेतना के अस्तित्व को स्वीकार किया गया है।<sup>4</sup> यह विचार प्रकृति के प्रति सम्मान एवं सह-अस्तित्व की भावना को विकसित करता है।

#### वैदिक दृष्टिकोण :

वैदिक साहित्य में प्रकृति के विविध स्वरूपों का अत्यंत सुंदर एवं व्यापक वर्णन मिलता है। ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद एवं अथर्ववेद में सूर्य, चंद्रमा, पृथ्वी, जल, वायु तथा वनस्पतियों की महत्ता का उल्लेख किया गया है। भारतीय ऋषियों ने प्रकृति को दैवीय शक्ति के रूप में स्वीकार किया तथा उसके संरक्षण को मानव जीवन के लिए आवश्यक माना।

ऋग्वेद में पृथ्वी को माता कहा गया है तथा मानव को उसका पुत्र माना गया है।<sup>5</sup> अथर्ववेद में वृक्षों एवं औषधियों की महिमा का वर्णन मिलता है। भारतीय संस्कृति में नदियों को देवी स्वरूप माना गया तथा वृक्षों की पूजा की परंपरा विकसित हुई। पीपल, बरगद, तुलसी आदि वृक्षों को धार्मिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया। यह दृष्टिकोण प्रकृति संरक्षण की भावना को सुदृढ़ करता है।

वैदिक चिंतन मानव को संयमित एवं संतुलित जीवन जीने की प्रेरणा देता है। प्रकृति के संसाधनों का

आवश्यकतानुसार उपयोग करने तथा उनका संरक्षण करने का संदेश भारतीय परंपरा में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

**बौद्ध दर्शन :** Gautama Buddha के दर्शन में अहिंसा, करुणा एवं सह-अस्तित्व की भावना को अत्यधिक महत्व दिया गया है। बौद्ध दर्शन सभी प्राणियों के प्रति दया एवं संवेदनशीलता का संदेश देता है। बुद्ध ने मानव को मध्यम मार्ग अपनाने की शिक्षा दी, जिसमें अति भोग एवं अति त्याग दोनों से बचने का संदेश निहित है।

बौद्ध चिंतन के अनुसार प्रकृति एवं जीव-जगत परस्पर जुड़े हुए हैं। यदि मानव प्रकृति को हानि पहुँचाता है, तो उसका प्रभाव अंततः मानव जीवन पर भी पड़ता है। बौद्ध धर्म में वृक्षों, पशु-पक्षियों एवं समस्त जीवों के प्रति करुणा की भावना विकसित की गई। यही कारण है कि बौद्ध दर्शन पर्यावरण संतुलन एवं जीव संरक्षण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है।<sup>6</sup>

**जैन दर्शन :** Mahavira के जैन दर्शन में अहिंसा को सर्वोच्च धर्म माना गया है। जैन धर्म केवल मनुष्यों ही नहीं, बल्कि सूक्ष्म जीवों तक के संरक्षण की शिक्षा देता है। जैन आचार विचार में प्रकृति एवं जीव-जंतुओं के प्रति अत्यधिक संवेदनशीलता दिखाई देती है।

जैन दर्शन यह मानता है कि प्रत्येक जीव में आत्मा का अस्तित्व होता है, इसलिए किसी भी जीव को हानि पहुँचाना अनुचित है। जैन धर्म में जल, वायु, अग्नि एवं पृथ्वी तक में जीवन की उपस्थिति स्वीकार की गई है।<sup>7</sup> यह विचार पर्यावरण संरक्षण की भावना को अत्यंत गहराई प्रदान करता है।

जैन साधु-संत अत्यंत संयमित जीवन व्यतीत करते हैं तथा प्रकृति के संसाधनों का न्यूनतम उपयोग करने की



शिक्षा देते हैं। यह जीवन शैली आधुनिक उपभोक्तावादी संस्कृति के विपरीत संतुलित एवं पर्यावरण-अनुकूल दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है।

**भगवद्गीता की दृष्टि :** Bhagavad Gita में मानव जीवन, प्रकृति एवं नैतिकता के संबंध में अत्यंत गहन विचार प्रस्तुत किए गए हैं। गीता निष्काम कर्म, आत्मसंयम एवं संतुलित जीवन पर बल देती है। गीता के अनुसार मानव को प्रकृति के नियमों के अनुरूप जीवन व्यतीत करना चाहिए।<sup>8</sup>

भगवद्गीता में प्रकृति को ईश्वर की शक्ति के रूप में स्वीकार किया गया है। गीता यह संदेश देती है कि मानव को प्रकृति के संसाधनों का उपयोग लोभ एवं स्वार्थ से प्रेरित होकर नहीं, बल्कि संतुलन एवं आवश्यकता के आधार पर करना चाहिए। गीता में संयम, कर्तव्य एवं संतुलित जीवन शैली को मानव कल्याण का आधार माना गया है।

वर्तमान समय में जब पर्यावरणीय संकट निरंतर बढ़ता जा रहा है, तब गीता का संतुलन एवं संयम का संदेश अत्यंत प्रासंगिक प्रतीत होता है। भारतीय दार्शनिक चिंतन मानव को प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण संबंध स्थापित करने तथा पर्यावरण संरक्षण की दिशा में नैतिक दृष्टिकोण अपनाने की प्रेरणा देता है।

### **मानव और प्रकृति का संबंध :**

मानव और प्रकृति का संबंध परस्पर निर्भरता का है। प्रकृति के बिना मानव जीवन की कल्पना असंभव है। भारतीय चिंतन में मानव को प्रकृति का स्वामी नहीं, बल्कि उसका अंग माना गया है। जब मानव प्रकृति का अंधाधुंध शोषण करता है, तब पर्यावरणीय असंतुलन उत्पन्न होता है।

भारतीय संस्कृति में वृक्षारोपण, नदी पूजा, पशु संरक्षण तथा पर्वतों के प्रति श्रद्धा जैसी परंपराएँ पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में सहायक रही हैं। आधुनिक समाज को इन मूल्यों को पुनः अपनाने की आवश्यकता है।

### **पर्यावरण संरक्षण में भारतीय दर्शन की प्रासंगिकता :**

वर्तमान समय में भारतीय दार्शनिक चिंतन अत्यंत प्रासंगिक प्रतीत होता है। भारतीय दर्शन संयम, संतुलन, सह-अस्तित्व एवं नैतिकता पर आधारित जीवन शैली का समर्थन करता है। यदि मानव सीमित उपभोग, प्रकृति के प्रति सम्मान एवं पर्यावरणीय नैतिकता को अपनाए, तो पर्यावरणीय संकट को काफी हद तक नियंत्रित किया जा सकता है।

आज “सस्टेनेबल डेवलपमेंट” अर्थात् सतत विकास की अवधारणा विश्वभर में महत्वपूर्ण मानी जा रही है, जबकि भारतीय संस्कृति सदियों पूर्व से ही संतुलित जीवन शैली की शिक्षा देती रही है।

### **निष्कर्ष :**

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि वर्तमान पर्यावरणीय संकट मानव की अनियंत्रित भौतिकवादी प्रवृत्ति, उपभोक्तावादी मानसिकता तथा प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन का परिणाम है। आधुनिक विज्ञान एवं तकनीकी विकास ने जहाँ मानव जीवन को सुविधाजनक एवं उन्नत बनाया है, वहीं दूसरी ओर प्रकृति एवं मानव के मध्य स्थापित संतुलन को गंभीर रूप से प्रभावित भी किया है। औद्योगीकरण, शहरीकरण, वनों की कटाई, प्रदूषण तथा प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक उपयोग ने पर्यावरणीय असंतुलन को बढ़ावा दिया है। इसके परिणामस्वरूप वैश्विक



ऊष्मीकरण, जलवायु परिवर्तन, जल संकट, जैव विविधता का विनाश तथा प्राकृतिक आपदाओं जैसी समस्याएँ निरंतर गंभीर होती जा रही हैं। यह स्थिति केवल पर्यावरण के लिए ही नहीं, बल्कि संपूर्ण मानव सभ्यता के अस्तित्व के लिए भी एक बड़ी चुनौती बन चुकी है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय दार्शनिक चिंतन प्रकृति एवं मानव के मध्य संतुलित, नैतिक एवं सह-अस्तित्व आधारित संबंध स्थापित करने पर विशेष बल देता है। भारतीय दर्शन में प्रकृति को केवल भौतिक संसाधन नहीं माना गया है, बल्कि उसे जीवन, चेतना एवं आध्यात्मिकता का आधार स्वीकार किया गया है। वेद, उपनिषद, भगवद्गीता, बौद्ध एवं जैन दर्शन सहित भारतीय ज्ञान परंपरा में प्रकृति के प्रति सम्मान, करुणा, अहिंसा, संयम तथा संरक्षण की भावना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। भारतीय संस्कृति में पृथ्वी को माता, नदियों को देवी, वृक्षों को देवतुल्य तथा समस्त जीव-जंतुओं को सृष्टि का महत्वपूर्ण अंग माना गया है। यह दृष्टिकोण मानव को प्रकृति के प्रति संवेदनशील एवं उत्तरदायी बनने की प्रेरणा प्रदान करता है।

भारतीय दार्शनिक परंपरा यह संदेश देती है कि मानव प्रकृति का स्वामी नहीं, बल्कि उसका अभिन्न अंग है। अतः प्रकृति का संरक्षण करना मानव का नैतिक एवं सामाजिक दायित्व है। भारतीय चिंतन “वसुधैव कुटुम्बकम्” की भावना के माध्यम से संपूर्ण विश्व को एक परिवार के रूप में देखता है तथा सह-अस्तित्व एवं संतुलन की शिक्षा देता है। वर्तमान समय में जब संपूर्ण विश्व पर्यावरण संरक्षण एवं सतत विकास की दिशा में प्रयासरत है, तब भारतीय दर्शन की यह विचारधारा अत्यंत प्रासंगिक सिद्ध होती है।

यह अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि पर्यावरणीय संकट का समाधान केवल वैज्ञानिक उपायों से संभव नहीं है, बल्कि इसके लिए नैतिक एवं सांस्कृतिक चेतना का विकास भी आवश्यक है। जब तक मानव अपनी जीवन शैली में संयम, संतुलन एवं प्रकृति के प्रति सम्मान की भावना को नहीं अपनाएगा, तब तक पर्यावरण संरक्षण के प्रयास पूर्णतः सफल नहीं हो सकते। भारतीय दार्शनिक चिंतन मानव को सीमित उपभोग, नैतिक जीवन, अहिंसा तथा प्रकृति-समन्वित जीवन शैली अपनाने की प्रेरणा देता है, जो वर्तमान पर्यावरणीय संकट के समाधान में अत्यंत सहायक सिद्ध हो सकती है।

अतः आवश्यकता इस बात की है कि आधुनिक समाज भारतीय सांस्कृतिक एवं दार्शनिक मूल्यों को पुनः आत्मसात करे तथा प्रकृति के साथ संतुलित, संवेदनशील एवं सामंजस्यपूर्ण संबंध स्थापित करे। शिक्षा, सामाजिक जागरूकता तथा नैतिक मूल्यों के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण की भावना को विकसित किया जाना चाहिए। यदि मानव प्रकृति के साथ सहयोग एवं सह-अस्तित्व का मार्ग अपनाए, तो न केवल पर्यावरणीय संकट को नियंत्रित किया जा सकता है, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित, स्वस्थ एवं संतुलित भविष्य का निर्माण भी संभव हो सकेगा। वास्तव में प्रकृति का संरक्षण ही मानवता के संरक्षण का आधार है, और यही पृथ्वी के सुरक्षित एवं समृद्ध भविष्य की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

#### **संदर्भ सूची :**

1. राधाकृष्णन, सर्वपल्ली। भारतीय दर्शन। नई दिल्ली: राजपाल एंड संस, 2005, पृ. 45-52।



2. शर्मा, रामविलास। भारतीय संस्कृति और पर्यावरण चेतना। नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2010, पृ. 78-84।
3. उपाध्याय, बलदेव। भारतीय दर्शन का इतिहास। वाराणसी: चौखंबा प्रकाशन, 2008, पृ. 112-118।
4. ऋग्वेद। गोरखपुर: गीता प्रेस, 2016, मंडल 10, सूक्त 90, पृ. 421-425।
5. ईशोपनिषद्। गोरखपुर: गीता प्रेस, 2018, मंत्र 1-5, पृ. 12-16।
6. भगवद्गीता। गोरखपुर: गीता प्रेस, 2019, अध्याय 3, श्लोक 10-15, पृ. 67-72।
7. जैन, महेंद्र कुमार। जैन दर्शन और पर्यावरण। जयपुर: साहित्यागार, 2012, पृ. 95-101।
8. संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण प्रतिवेदन (United Nations Environment Report), 2023, पृ. 25-39।
9. सिंह, नगेन्द्र। पर्यावरण और भारतीय संस्कृति। नई दिल्ली: लोकभारती प्रकाशन, 2011, पृ. 56-63।
10. बुद्ध, गौतम। धम्मपद (अनुवाद संस्करण)। वाराणसी: बौद्ध भारती प्रकाशन, 2015, पृ. 88-94।